अशोक वाजपेयी की कविताओं के साथ कुछ दूर तक टहलते हुए

जीतेश्वरी

जय मां बंजारी हॉस्टल
ओसेन अकादेमी के सामने वाली सड़क,
मस्जिद रोड, कोटा,
रायपुर (छत्तीसगढ़) 492010
jeetsahu5316@gmail.com

मुझे यह स्वीकार करने में किसी तरह का कोई संकोच नहीं है कि मेरे प्रिय कवियों में अशोक वाजपेयी एक हैं । मेरी दृष्टि में अशोक वाजपेयी समकालीन हिंदी कविता के अत्यंत महत्वपूर्ण हस्ताक्षर है।

मुझे अशोक वाजपेयी की कविताओं के साथ कुछ दूर तक टहलना, उन कविताओं के संग- साथ होना प्रीतिकर लगता है। वैसे भी अच्छी कविताओं के साथ कुछ दूर तक टहल आना जीवन में ऐसा कुछ पा लेना होता है जो हमारे लिए बेहद मूल्यवान होता है। मेरे पास अशोक वाजपेयी की कविताओं के नाम पर अरविंद त्रिपाठी द्वारा सम्पादित प्रतिनिधि कविताऐं ही है, जिसका प्रकाशन वर्ष सन् 1999 है अर्थात् आज से लगभग उन्नीस-बीस वर्ष पूर्व की कविताएँ इस संचयन में संगृहित हैं। जाहिर है इससे अशोक वाजपेयी के संपूर्ण कवि-कर्म का लेखा जोखा ले पाना कुछ कठिन कार्य है। इस एक प्रतिनिधि संग्रह के आधार पर अशोक वाजपेयी की कविता की दुनिया को बूझ पाना पूरी तरह से न्यायोचित कार्य भी नहीं होगा। पर इससे अशोक वाजपेयी की कविता की दुनिया को और कवि के भीतर के संसार को जानना - समझना बहुत मुश्किल काम हो, ऐसा भी नहीं है।

अशोक वाजपेयी के इस प्रतिनिधि संग्रह को लेकर अरविंद त्रिपाठी की अपनी एक अलग विचार सरणी है, ज़ाहिर है इससे हमारी बहुत ज्यादा सहमति-असहमति हो सकती है। होनी भी चाहिये अन्यथा कविता और कवि को हम उस तरह से देख और समझ नहीं पायेंगे, जिस तरह से उन्हें बार-बार नये रूपों में देखा और समझा जाना चाहिये। इसलिए मेरा सरोकार उन तथ्यों में कतई नहीं है जिन तथ्यों की ओर अरविंद त्रिपाठी आँख मूंदकर पाठकों को अपनी भूमिका के माध्यम से ले जाना चाहते हैं। मैं नही चाहती कि अशोक

वाजपेयी की कविताएँ और मेरे बीच कोई तीसरा समीक्षक किस्म का जीव आये, जिसकी बनाई हुई पगडंडी से चलकर मैं अशोक वाजपेयी की कविताओं तक पहुँच सकूँ। कविता और उसके पाठक के बीच किसी मीडियेटर की जरूरत भी क्यों हो ? तो, चलिये अशोक वाजपेयी की कविताओं के साथ मुझे कुछ दूर तक टहल आने दीजिये। मैं पहले ही यह स्वीकार कर लूं कि 'मौत की ट्रेन में दिदिया' मेरी सर्वाधिक प्रिय कविताओं मे से एक है।

"न कोई नाम है न संख्या न रंग
सब एक दूसरे से बेखबर हैं और बेसामान
न ट्रेन के रूकने का इंतजार है न किसी के आने का
नीचे घास पर और आंगन में छुकछुक गाड़ी का खेल खेलते
जुनू, डुल्लो दूबी चिंकू
उस ट्रेन की किसी खिड़की से
दिदिया को पता नहीं दीख पड़ते हैं या नहीं "

अशोक वाजपेयी ने अपने परिवार पर ढ़ेर सारी कविताएँ लिखी है। माँ, पिता, बहन, पुत्र, पुत्री, बहू, सब पर एक तरह से उनका पूरा परिवार उनकी कविताओं में आकार पाता है। उनके लिए परिवार का अपना एक अलग महत्व है। इन कविताओं का अपना एक अलग और विरल स्वर है। अशोक वाजपेयी ने इन कविताओं को अतिशय भावुकता और लिजलिजेपन से बचा लिया है। इन कविताओं में जैसे उन्होंने अपनी समूची करूणा उड़ेल दी है, एक सच्ची मार्मिकता के रंग से जैसे इन रिश्तों को एक नया रूप प्रदान कर दिया है।

यह कविता एक तरह से समकालीन हिंदी कविता में अपनी तरह की अकेली और विरल कविता है, देखा जाय तो समकालीन हिंदी कविता में माँ पर लिखी हुई कविताओं का जैसे अंबार है, पर ऐसी विरल फैण्टेसी की कविता एक भी नहीं है, जिसमें न लिजलिजी करूणा है और न ही अनेक बार दोहराई-तिहराई गई भोथरी संवेदना। 'मौत की ट्रेन में दिदिया', यह रूपक भी हिंदी कविता में विरल है। माँ के प्रति जो करूणा, लगाव, प्रेम अशोक वाजपेयी की इस कविता में दिखाई देती है, उसे कवि ने शब्दों में कम और भावनाओं में ज्यादा रचा है।

अशोक वाजपेयी की कविताओं को लेकर एक सिरे से ही यह फतवा जारी कर दिया गया है कि, वे घोषित -अधोषित रूप से रूपवादी कवि हैं जैसे कि, कविता में रूपवादी होना कोई घनघोर अपराध है। सुप्रसिद्ध हिंदी कवि शमशेर बहादुर सिंह की कविताओं को और स्पेनिश कवि पाब्लो नेरूदा को ये समीक्षक किस कोटि में रखना चाहेंगे, रूपवादी तो ये भी हैं। सोवियत कवि ओसिप मंदेलस्ताम को आप क्या कहेंगे। बहरहाल प्रगतिशील कवि अगर रूपवादी नहीं है तो उसकी कविता प्रगतिशील कविता भी नहीं हो सकती है। कभी मुक्तिबोध के रूपवाद पर भी बहस छिड़नी चाहिए कि मुक्तिबोध में रूपवाद किस तरह से आता है और उनकी कविता को अत्यंत प्रासंगिक किस तरह से बनाता है।

बहरहाल इन सारे विवादों से परे मैं फिर से अशोक वाजपेयी की कविताओं की दुनिया से गुजरना चाहती हूँ। कुछ दूर तक संग-साथ चलना चाहती हूँ। अशोक वाजपेयी की एक और कविता मुझे बेहद प्रिय है। 'मुझे चाहिए'

'एक खिड़की से मेरा काम नहीं चलेगा
मुझे चाहिए पूरा का पूरा आकाश
अपने असंख्य नक्षत्रों और ग्रहों से भरा हुआ।
इस ज़रा सी लालटेन से नहीं मिटेगा
मेरा अंधेरा
मुझे चाहिए
एक धधकता हुआ ज्वलंत सूर्य'

अब आप क्या करेंगे, अशोक वाजपेयी की इस कविता को आप किस श्रेणी में रखेंगे रूपवाद का आईना यहाँ तो पूरी तरह से चटक ही नहीं गया है, टूट भी गया है। कवि का काम एक खिड़की से चलने वाला नहीं है, उसे एक मुकम्मल आकाश चाहिये। असंख्य नक्षत्रों और ग्रहों से भरा हुआ। एक लालटेन से अंधेरा नहीं मिटने वाला, एक धधकता हुआ ज्वलंत सूर्य चाहिए।

अशोक वाजपेयी के यहाँ प्रतिरोध के अपने अलग मुहावरे हैं। एक अलग काव्य विन्यास, जिसमें कोई बड़बोलापन नहीं है उसे समझा जाना चाहिये। अशोक वाजपेयी की कविताएँ एक तरह से मेरी दृष्टि में प्रतिपक्ष की कविताएँ है एवं ऐसे सजग और संवेदनशील कवि की कविताएँ, जिसे प्रतिपक्ष में खड़ा होना स्वीकार है।

अशोक वाजपेयी की एक कविता है 'थोड़ा सा' जिसमें वे मनुष्यता को एक अलग तरह से रेखांकित करते हैं। 'थोड़ा सा' कविता का प्रारंभ कुछ इस तरह से है -

'अगर बच सका
तो वही बचेगा
हम सबमें थोड़ा सा आदमी
जो रौब के सामने नहीं गिड़गिड़ाता
अपने बच्चे के नम्बर बढ़वाने नहीं जाता मास्टर के घर'

कविता का अंत कुछ इस तरह से है -

'वही थोड़ा सा आदमी
जिसे खबर है कि,
वृक्ष अपनी पत्तियों से गाता है अहरह एक हरा गान

आकाश लिखता है नक्षत्रों की झिलमिल में एक दीप्त वाक्य
पक्षी आंगन में बिखेर जाते हैं एक अज्ञात व्याकरण
वही थोड़ा सा आदमी
अगर बच सका
तो वही बचेगा।'

''थोड़ा सा आदमी'' कविता पर सम्भवतः अबतक कोई मुकम्मल चर्चा कहीं हुई हो ऐसा मुझे जान नहीं पड़ता है। उन थोड़े से आदमियों की चिंता करना जो सचमुच आदमी है, एक ऐसा कवि ही कर सकता है जिसके मन में प्रेम हो और प्रकृति के प्रति गहरा अनुराग भाव। अशोक वाजपेयी की यह चिंता सम्भवतः इस पृथ्वी को बचा लेने की चिंता से कमतर नहीं जो थोड़े से अच्छे मनुष्यों के द्वारा ही संभव है।

आप समकालीन हिन्दी कविता पर एक निगाह डालिये, खासकर इधर की कविता पर तो आप दंग रह जायेंगे कि किस कदर यांत्रिक कविताएँ इधर लिखी जा रहीं हैं। लगता है इन कविताओं में संवेदनशील, काव्य अनुरागी कवि ही एक सिरे से अनुपस्थित है और कोई लौह यंत्र इन कविताओं को जैसे यांत्रिक ढंग से लिख रहा है, जिसमें काव्य का शारीरिक ढांचा तो दिखाई देता है किंतु जिसमें काव्य की आत्मा सिरे से ही गायब है। भावों की वह अविरल तरंग भी नहीं, विचारों का अनथक प्रवाह भी नहीं। न प्रतीक ठीक से गुंथे हुए हैं, न उपमा और रूपक ही अपने सहज सरल अंदाज में काव्य में बिखरे हुए हैं। भाषा भी इतनी यांत्रिक जैसे लौह यंत्र से अभी अभी निकल कर आई हो, प्राणहीन, स्वप्नहीन, लयहीन।

अशोक वाजपेयी की कविताएँ एक तरह से गहरे अंर्तद्वंद से उपजी हुई मानवीय करूणा और संवेदना से रची-बसी कविताएँ है जिसमें यत्र-तत्र विचार भी बिखरे हुए है। भाषा की बेवजह फिजूल खर्ची या चकाचौंध नहीं। सधी हुई संयमित काव्य भाषा जो मौन को भी अपने भीतर एक 'स्पेस' प्रदान करती है। अशोक वाजपेयी की कविताओं की खूबी है।

अशोक वाजपेयी की एक और कविता है ''कुछ तो'' यह सन् 1987 में लिखी हुई कविता है। यह सन् 1992 से पाँच वर्ष पूर्व लिखी हुई कविता। सब कुछ नष्ट किये जाने की पूर्व पीठिका रची जा रही थी। ऐसे गहरे वक्त में अशोक वाजपेयी दूर तलक देख पाने की कोशिश कर रहे थे। उनकी नज़र बहुत आगे तक देख रही थी भले ही अचेतन में हो पर उन्हें लग रहा था देर-सवेर यहाँ पूरा देश एक अंधेरे दौर से गुजरने वाला है। अशोक वाजपेयी की अन्य कविताओं की तरह एक आशावादी नज़रिया इस कविता के मूल में है। सबकुछ नष्ट नहीं होगा, कुछ तो बच ही जायेगा का आशावादी स्वर।

'सबकुछ नष्ट नहीं होगा
कुछ तो बच ही जायेगा
जले हुए ठूंठों मे से एक की नंगी डाल पर
एक नया किसलय

झर जायेंगे सारे पाप
पर बचा रह जाएगा एकाध
असावधानी से हो गया पुण्य,
किसी भी देश में और किसी भी दौर में'

मनुष्यता और मानवीय संवेदनाओं को पूरी तरह से नष्ट नहीं किया जा सकता है। मनुष्य विरोधी समय में भी असहमति में हाथ उठाने वालों की कोई कमी नहीं होती है। सत्ता से विरोध का दम कुछ लोगों में बचा ही रहता है। अशोक वाजपेयी की कविताओं का यह आशावादी स्वर, इस आशावादिता के पीछे अनेक असहमतियों का स्वर उनकी कविताओं को एक स्तरीय नही बहुस्तरीय कविता बनाती है। उनकी असंख्य कविताओं में मानवीय करूणा का क्षरण और मानवीय संवदेनाओं का स्खलन कविता के केन्द्रबिन्दु में स्पष्ट रूप से दिखाई देता है। वे मानवीय करूणा के और संवेदना को हर स्तर पर जरूरी मानते हुए उसे बचा लेने की व्यग्र गुहार करने वाले हमारे समय के बेहद गम्भीर कवियों मे से एक हैं।

सुप्रसिद्ध शास्त्रीय गायक मल्लिकार्जुन मंसूर पर उनकी एक कविता है जो गायक के नाम पर ही है। मल्लिकार्जुन मंसूर हमारे समय के महान गायकों मे से एक हैं।

''काल के खुरदरे आँगन में
समय के लंबे गूँजते गलियारों में
वे गाते हैं
अपने होने के जीवट का अनथक गान
वे चहल कदमी करते हुए
किसी प्राचीन कथा के बिसरा दिये गए नायक से
पूछ आते हैं उसका हालचाल''

काल के खुरदुरे आँगन में और समय के लंबे गूँजते गलियारो में गाने वाले मल्लिकार्जून मंसूर पर इतनी सुंदर काव्य पंक्तियाँ केवल अशोक वाजपेयी जैसे कवि ही लिख सकते हैं जिनके यहाँ संगीत, चित्रकला, नृत्य के प्रति एक प्रबल आसक्ति है। अशोक वाजपेयी की कविता की जड़ों को दूर-दूर तक सींचने में संगीत, चित्रकला और नृत्य का भी गहरा योगदान रहा है। यही कारण है कि अशोक वाजपेयी ने अपने समकालीन संगीतकारों, चित्रकारों, नृत्यांगनाओं पर सर्वाधिक कविताएँ लिखी है। संभवतः यही कारण है कि उनकी कविताओं में विरल संगीत, रंग और विविध भाव भंगिमाओं के लिए एक अलग और खास जगह भी है।

तो मित्रों, अशोक वाजपेयी की कविताओं के साथ कुछ दूर तक टहलते हुए, उसके संग-साथ होते हुए जो कुछ भी मैं समझ पाई उसे मैंने ज्यों का त्यों रख देने में कोई संकोच नहीं किया है। सहमति-असहमति के लिए 'स्पेस' छोड़ती हुई मै आपसे विदा लेती हूँ। आमीन...!

सन्दर्भ :

1. प्रतिनिधि कविताएँ, अशोक वाजपेयी, सं. अरविन्द त्रिपाठी, राजकमल प्रकाशन -1999